सत्यकाम महर्षि गौतम के आश्रम में

मेरे प्यारे! ऋषिवर! हमारे यहां आचार्जनों के नाना वाक्य आते रहते हैं। जब यहां देखो, जाबाला पुत्र सत्यकाम महर्षि गौतम के आश्रम में पंहुचें तो गौतम जी ने कहा कि हे बालक! कैसे आए? उन्होंने कहा कि प्रभु! मैं आपका शिष्य बनने के लिए, ब्रह्म विद्या का पान करने के लिए आया हूँ। उन्होंने कहा कि भाई! तुम्हारा गोत्र क्या है? तो हमारे यहां एक परम्परा आती है, कि आचार्य कुल में जब ब्रह्मचारी जाता है, तो आचार्य उसके गोत्र का प्रश्न करता है, तो ब्रह्मचारी ने कहा कि प्रभु! मुझे मेरे गोत्र का ज्ञान नहीं हैं, मैं इसका निर्णय माता से करके आपके शरण में आता हूँ। तो जाबाला पुत्र सत्यकाम जाबाला के समीप पंहुचा और कहा माता! आचार्य ने कहा है, कि तुम्हारा गोत्र क्या है?

स ह हारिद्रुमतं गौतममेत्योवाच ब्रह्मचर्यं भगवति वत्स्याम्युपेयां भगवन्तमिति॥
छान्दयोग्यपनिषद ४.४.३

पदार्थः नारायण स्वामी

वह (सत्यकाम) प्रसिद्ध गौतम गोत्र उत्पन्न हरिद्रुमान् के पुत्र हारिदुरमत के (समीप) जाकर बोला हे भगवन्! ब्रह्मचर्य धारण करूंगा (भगवन्त) आपके समीप आया हूँ।

सत्यकाम का गोत्र

व्याख्याः श्रृङ्गी मुनि कृष्णा दत्त जी महाराज

हे माता! आचार्य ने पूछा है मैं किस गोत्र वाला हूं।

सत्यकामो ह जाबालो जबालां मातरमामन्त्रयाञ्चक्रे ब्रह्मचर्यं भवति विवत्स्यामि किङ्गोत्रोन्वहमस्मीति॥ छान्दयोग्यपनिषद ४.४.१

पदार्थः नारायण स्वामी

कहा जाता है कि जबाला के पुत्र सत्यकाम ने माता जबाला से पूछा कि माता! मैं ब्रह्मचर्य धारण करूंगा बतलाओ कि मैं किस गोत्र वाला हूँ।

शृङ्गी ऋषि कृष्ण दत्त जी महाराज

व्याख्याः शृङ्गी मुनि कृष्ण दत्त जी महाराज

उन्होंने कहा कि हे सत्यकाम्! आचार्य से उच्चारण कर देना, कि मुझे मेरे गोत्र का ज्ञान नहीं। मैंने नाना महापुरुषों की सेवाएं कीं हैं।

छान्दयोग्यपनिषद ४.४.२ सत्यकाम का गोत्र।

सा हैनमुवाच नाहमेतद्वेद तात यद्गोत्रस्त्वमसि बह्वहं चरन्ती परिचारिणी यौवने त्वामलभे साहमेतन्न वेद यद्गोत्रस्त्वमसि जबाला तु नामाहमस्मि सत्यकामो नाम त्वमसि स सत्यकाम एव जाबालो ब्रवीथा इति॥

पदार्थः नारायण स्वामी

वह प्रसिद्ध (जबाला) इस (अपने पुत्र) से बोली - हे प्रिय (पुत्र) मैं यह नहीं जानती जिस गोत्र वाला तू है। बहुतों (पुरूषों) की सेवा करती हुई (इस) सेविका ने तुझे प्राप्त किया है। सो मैं यह नहीं जानती जिस गोत्र का तू है । परन्तु मैं जबाला नाम वाली हूँ और सत्यकाम नाम वाला तू है । सो तू सत्यकाम जाबाल ऐसा बतला देना।

जाबाला पुत्र को सत्यकाम की उपाधि

सत्यकाम् इस वाक्य को ले करके जब आचार्य कुल में पंहुचा, तो आचार्य ने कहा कि बोलो हे ब्रह्मचारी! तुम्हारा गोत्र क्या है? उन्होंने कहा कि प्रभु! मुझे मेरे गोत्र का ज्ञान नहीं, माता ने ये कहा है कि प्रभु! मुझे भी गोत्र का ज्ञान नहीं है, क्योंकि मैंने नाना महापुरुषों की सेवाएं की हैं। जाबाला पुत्र के इन वाक्यों को पान करते ही ऋषि ने कहा ब्रह्मचारी! तुम तो वास्तव में ब्राह्मण हो। ब्राह्मण की उपाधि प्रदान की, क्योंकि सत्यवादी ब्राह्मण होता है। जो सत का पथिक होता है, जिसे सत्य के उच्चारण करने में मान अपमान की मात्रा नहीं होती वह वास्तव में ब्राह्मण कहलाया जाता है।

तँ होवाच किङ्गोत्रो नु सोम्यासीति स होवाच नाहमेतद्वेद भो यद्गोत्रोऽहमस्म्यपृच्छं मातरँ सा मा प्रत्यब्रवीद्बह्वहं चरन्ती परिचरिणी यौवने त्वामलभे साहमेतन्न वेद यद्गोत्रस्त्वमसि जबाला तु नामाहमस्मि सत्यकामो नाम त्वमसीति सोऽहँ सत्यकामो जाबालोऽस्मि भो इति ॥ छान्दयोग्यपनिषद ४.४.४

पदार्थः नारायण स्वामी

उस (सत्यकाम) से वह ऋषि बोला - वह बोला - हे सोम्य! (तुम्हारा) गोत्र क्या है ? वह बोला - भगवन्! मैं यह नहीं जानता । जिस गोत्र का मैं हूं माता से मैंने पूछा था उसने मुझ से कहा - 'बहुत' (पुरूषों) की सेवा करती हुई (इस) सेविका ने तुझे प्राप्त किया है सो मैं यह नहीं जानती जिस गोत्र का तू है । परन्तु मैं जबाला नाम वाली हूं और सत्यकाम नाम वाला तू है भगवन्! सो मैं सत्यकाम जबाला हूं।

सत्यकाम को महर्षि गौतम द्वारा चार सौ गऊएं प्रदान करना

व्याख्याः श्रृङ्गी मुनि कृष्णा दत्त जी महाराज

आओ, मेरे कुल में आ जाओ मैं तुम्हे शिक्षा प्रदान करूंगा, बेटा! आचार्य गौतम ने उसको ब्राह्मण की संज्ञा प्रदान कर दी, मानो ब्राह्मण उसका अप्राहद हो गया। उस समय द्वितीय काल हुआ, रात्रि काल में विश्राम करना ही था, अगला दिवस आया, तृतीय दिवस आया, एक समय मुनिवरों! जब तृतीय दिवस आया तो आचार्य कोई वाक प्रगट नहीं कर रहा था, अब आचार्य तीन रात्रि के इस विचार में था, क्या इस ब्रह्मचारी को तूने ब्राह्मण तो उच्चारण कर दिया है, परन्तु ब्राह्मण है, अथवा नहीं है, इसके ऊपर भी तो विचार विनिमय होना चाहिए। मुनिवरों! देखो, यह वाक जब उन्होंने श्रवण किया, श्रवण करने के पश्चात विचार विनिमय अहा! अपने शब्दों से मन्थन किया श्रवण किया, और विचार विनिमय करके अन्त में यह निर्णय हुआ, क्या इसकी परीक्षा आगे ली जा सकेगी। ब्रह्मचारी तृतीय दिवस उनके समीप आया चरणों में ओत प्रोत हो करके बोले हे प्रभु! आप ने मुझे कोई सेवा नहीं दी है, क्योंकि मैं भी तो आपका ही ब्रह्मचारी हूँ, आपका ही शिष्य हूँ, आपके द्वारा मानो ब्रह्मचर्य व्रत का धारण करने आया हूँ। हे प्रभु! मुझे कोई सेवा दीजिए, उस समय उन्होंने कहा हे सत्यकाम! मेरी आज्ञा है, जाओं मेरे आश्रम में चार सौ गऊएं है, इन्हे ले जाओ, और जब तक यह एक सहस्र नहीं हो जांए, तब तक मेरे आश्रम में प्रविष्ट नही होना।

सत्यकाम को महर्षि गौतम द्वारा चार सौ गऊएं प्रदान करना

तँ होवाच नैतदब्राह्मणो विवक्तुमर्हति समिधँ सोम्याहरोप त्वा नेष्ये न सत्यादगा इति तमुपनीय कृशानामबलानां चतुःशता गा निराकृत्योवाचेमाः सोम्यानुसंव्रजेति ता अभिप्रस्थापयन्नुवाच नासहस्रेणावर्तेयेति स ह वर्षगणं प्रोवास ता यदा सहस्रँ संपेदुः ॥ छान्दयोग्यपनिषद ४.४.५

पदार्थः नारायण स्वामी

उस (सत्यकाम) से बोला - कि ऐसी (बात) अब्राह्मण प्रकट करने को समर्थ नहीं हो सकता । हे सोम्य! समिधम् ला तुझ को उपनीत करूंगा । तू सत्य से पृथक् नहीं हुआ । उसको उपनयन देकर दुबली पतली और कमजोर चार सौ गाय (गोशाला से) निकाल कर बोला । हे सोम्य! इनके पीछे पीछे जाओ उन (गायों) को हांकते हुए (सत्यकाम ने) कहा कि हजार गाएं हुए बिना न लौटूंगा । वह कहा जाता है कि, अनेक वर्ष वन में रहा वे (गायें) जब हजार हो गईं।

गऊओं का एक सहस्त्र गो हो जाना

व्याख्याः श्रृङ्गी मुनि कृष्णा दत्त जी महाराज

बेटा! यह आज्ञा उन्होंने प्रदान कर दी, आज्ञा पाते ही उसी समय सत्यकाम ने बेटा! चार सौ गऊओं को ले करके भयंकर वन में प्रस्थान किया। भ्रमण करते हुए बेटा! नित्य कर्म करते रहते थे, नित्यप्रति बेटा! सांय काल होता प्रातः काल होते ही बेटा! वह गऊँ स्थिर होती, मानो देखो, वह सन्ध्या मार्जन इत्यादि देखो, यज्ञ कर्म करने के लिए तत्पर होता था, यह कर्म उसका नित्यप्रति था मुनिवरों! उसके पश्चात जब समय व्यतीत हो गया, भयंकर वन में दूरी चले गएं, कुछ काल के पश्चात बेटा! एक समय देखो, प्रातःकाल में, सांयकाल को ब्रह्मचारी बेटा! देखो, स्नान करके और सन्ध्या मार्जन और तर्पण करने के पश्चात अग्नि होत्र करने वाला था, मुनिवरों! देखो, मानो गऊओं में से एक गऊ के बछड़े ने कहा अहा! मुनिवरों! देखो, वृख ने कहा हे सत्यकाम! हे आचार्य ब्रहे! अप्रतम् आचार्य पुत्र हे ब्रह्मचारी! हम एक सहस्त्र हो गएं हैं, क्या अब अपने गृह को गुरु के कुल को कोई स्थान होना चाहिए बेटा! ब्रह्मचारी ने उस वार्ता को स्वीकार कर लिया।

गऊओं का एक सहस्र गो हो जाना

छान्दयोग्यपनिषद ४.५.१

अथ हैनमृषभोऽभ्युवाद सत्यकाम३ इति भगव इति ह प्रतिशुश्राव प्राप्ताः सोम्य सहस्रँ स्मः प्रापय न आचार्यकुलम् ॥

पदार्थः नारायण स्वामी

अनन्तर उस (सत्यकाम) से बैल बोला हे सत्यकाम! (सत्यकाम बोला) भगवन्! ऐसा (सत्यकाम ने) उत्तर दिया (तब बैल ने कहा हे सोम्य! हम हजार हो गए हैं) हमें आचार्य कुल को ले चलो ।

प्राचीदिक्, दक्षिणीदिक्, प्रतीचिदिक्, उदीचिदिक् कला

व्याख्याः श्रृङ्गी मुनि कृष्ण दत्त जी महाराज

बेटा! सत्यकाम ने उन गऊओं की सेवा करते करते ब्रह्मज्ञान हो गया था। सबसे प्रथम इन्हें कलाओं का ज्ञान जिनको पूर्व, दक्षिण, पश्चिम, उतरायण, ध्रुवा, ऊर्ध्वा और पृथ्वी इत्यादि जितनी कलाएं हैं, सबका ज्ञान एक वृख ने उन्हे कराया था। बेटा! सबसे प्रथम कला का देखो, प्राचीदिग्, दक्षिण दिग्, प्रतीचीदिग्, उदीचीदिग् चार यह कलायें मानी गई हैं।

मेरे प्यारे! देखो, सत्यकाम बड़े प्रसन्न हुए और सत्यकाम ने जब यह अपने चलने के लिए अपना क्रियाकलाप बनाया तो वृषभ ने कहा कि हे सत्यकाम! मैं तुम्हें चार कलाओं का ज्ञान करा देता हूँ क्योंकि संसार में सोलह कलाएँ हैं उनमें से चार कलाओं का ज्ञान मैं कराता हूँ। सबसे प्रथम मानो प्राचीदिग और द्वितीय दक्षिणीदिग और तृतीय मानो प्रतीचीदिग् और उदीचीदिक यह चार कलाएँ हैं तुम इनका चिन्तन करना प्रारम्भ करो। मेरे प्यारे! देखो, उन्होंने उनका निर्णय कराया क्या प्राचीदिग कहते हैं जो पूर्व में रहने वाली अग्नि का स्थान है और देखो, द्वितीय दक्षिणायाम् व्रतम दक्षिणायम् इन्द्र का स्थान है और देखो, प्रतीचीदिग् में देखो, वरुण का स्थान है और मुनिवरो! देखो, उत्तरायण में सोम का स्थान है। इस प्रकार मुनिवरो! देखो, ऋषि ने अपना, उस वृषभ ने ब्रह्मचारी को अपना यह निर्णय दिया क्या मानो यह चार कलाएँ है जो प्राची में रहता अग्नि का स्थान है। एक अग्नि कला है और द्वितीय कला दक्षिण है जहाँ मानो देखो, इन्द्र का स्थान रहता है, यहीं, वहाँ देखो, ब्रह्म का स्थान भी यहीं रहता है, यह पितरजनों का स्थान है। तो इसी प्रकार तुम देखो, अमृतम् और अव्रते वरूण कहते हैं जल को सोमम् ब्रह्मा व्रतम्। बेटा! वह वरूण है जिस वरूण को ले करके हम प्रायः अपने क्रियाकलापों में महान बनने के लिए सदैव तत्पर रहते हैं। तो मुनिवरो!

देखो, वरुणाय ब्रह्मा और मुनिवरो! देखो, सोमाय व्रतम। सोम मुनिवरो! देखो, सोम कहते हैं, जो ज्ञान है, विज्ञान है। मेरे प्यारे! उन्होंने कहा यह चार कलाओं का ज्ञान तुम्हें मानो देखो, मैंने कराया है और अगला जो ज्ञान तुम्हें कराएँगे वह अग्नि देवता कराएँगे, अग्नि तुम्हें चार कलाओं का ज्ञान प्रदान करेगा।
मेरे प्यारे! देखो, जाबाला पुत्र सत्यकाम ने कहा बहुत प्रिय। मेरे प्यारे! उनका अन्तरात्मा तृप्त होने लगा और ज्ञान और विज्ञान में क्योंकि उनकी बड़ी निष्ठा थी और वह कलाओं में प्रतिष्ठित होने वाले थे।
मेरे प्यारे! देखो, जब उन्होंने इस प्रकार वर्णन किया अमृताम् भूतम् ब्रह्मे लोकाम्। मेरे प्यारे! देखो, पूर्व में अग्नि का स्थान है जो प्रकाश देता है सूर्य उसी से उदय होता है और मुनिवरो! देखो, दक्षिणाय में इन्द्र का स्थान है जहाँ से मुनिवरो! देखो, सोम का जन्म होता है। मुनिवरो! देखो, इन्द्र अपनी शचि को ले करके गमन करता है। इसी प्रकार मेरे पुत्रो! देखो, अमृतम् प्रतीचीदिग् में यह अमृताम् भूतम् वरुण का स्थान जहाँ मुनिवरो! देखो, मानव अपने देखो, कृषक अपनी कृषि के लिए अपने में वरूण का स्थान लिए हुए होता है। इसी प्रकार मेरे प्यारे! देखो, सोमाम् ब्रह्मे जहाँ ऋषि मुनि अपने में सोम की याचना करते हैं। हमारे यहाँ सोम की विवेचना करने वालो ने कहा क्या सोम नाम ज्ञान का है, सोम नाम साधना का है और सोम नाम मेरे प्यारे! देखो, वह वायु मण्डल को पवित्र बनाने का नाम सोम कहा जाता है। तो इसीलिए मानव को सौम्यता को धारण करना चाहिए। तो इसीलिए सोम मेरे प्यारे! अग्नि है जो प्रकाश को देने वाली है वह सोम कहलाती है। तो हम सोमाम् भूतम् ब्रह्मा मेरे प्यारे! देखो, उत्तराणाम् ब्रहे देखो, उत्तरायण ही मानव के जीवन को महान बनाता है।
मेरे प्यारे! देखो, वृषभ ने, उन्हें गऊँ के बछड़े ने चार कलाओं का ज्ञान कराया। उन्होंने कहा यह चार कलाएँ हैं सबसे प्रथम प्राचीदिग जो अग्नि का स्थान है और द्वितीय दक्षिण का स्थान है जहाँ इन्द्र रहता है इन्द्र का वास है और उदीची में

रहने वाला मङ्गलम् ब्रह्मे सोमम् ब्राहा बेटा! देखो, वही तो अपने में अभ्यस्त हो रहा है। वही जानना चाहता है कि जिज्ञासाम् भूतम् यह परमात्मा का जो अमूल्य जगत है यह क्या है? तो इसके ऊपर बेटा! मानव अपने में प्रायः अनुसन्धान करता रहा है अथवा विचार विनिमय करता रहा है।

प्राचीदिक्, दक्षिणीदिक्, प्रतीचिदिक्, उदीचिदिक् कला

ब्रह्मणश्च ते पादं ब्रवाणीति ब्रवीतु मे भगवानिति तस्मै होवाच प्राची दिक्कला प्रतीची दिक्कला दक्षिणा दिक्कलोदीची दिक्कलैष वै सोम्य चतुष्कलः पादो ब्रह्मणः प्रकाशवान्नाम॥ छान्दयोग्यपनिषद ४.५.२

पदार्थः नारायण स्वामी

(सत्यकाम से ऋषम ने कहा कि) तुझ को ब्रह्म के (महिमारूपी) पाद का उपदेश करूं आप मुझे कहें । उसके लिए (ऋषभ) बोला - (ब्रह्म के एक पाद की) एक कला पूर्व दिशा है, दूसरी कला पश्चिम दिशा, तीसरी कला दक्षिण दिशा, चौथी कला उत्तर दिशा है हे सोम्य ब्रह्म की यह चतुष्कलपाद (प्रकाशवान्, नाम) प्रकाशवान् नाम वाला है।

प्राचीदिक्, दक्षिणीदिक्, प्रतीचिदिक्, उदीचिदिक् कला

व्याख्याः शृङ्गी मुनि कृष्ण दत्त जी महाराज

प्राचीदिक् कला

तुम इन चार कलाओं के ऊपर विचार विनिमय करना प्रारम्भ कर दो बेटा! सत्यकाम ने अग्नि होत्र के पश्चात रात्रि की गोद में चला गया, निन्द्रा की गोद में चला गया, कहा जाता था क्योंकि जिज्ञासु को बेटा! निन्द्रा नही आती जिज्ञासु तो अपनी आत्मा जिज्ञासा में रमण करता रहता है। वह बेटा! देखो, निन्द्रा की गोद में जाने ही वाला था, परन्तु मन्थन करना प्रारम्भ कर दिया, क्या प्राचीदिक तो पूर्व दशा को कहा जाता है, और प्रतीचीदिक मानो देखो, दक्षिणदिक दक्षिण को अहा! प्रतीचिदिक पश्चिम दिशा को कहा जाता है। दक्षिणाय दक्षिण को और उत्तर को कहा जाता है, इसके चार वितरण कहलाए गएं हैं। देखो, एषणाय है त्रिती है गौरानी है इत्यादि नाना प्रकार का उन्होंने विश्लेषण करना प्रारम्भ कर दिया। उन्होंने कहा सबसे प्रथम मानो देखो, इस वृख ने कहा है क्या सबसे प्रथम कला का नाम मानो देखो, प्राचीदिक माना गया है, इससे सूर्य उदय होता है, सूर्य प्रातःकाल में उदय होने वाला मानो देखो, पूर्व दशा के प्रकाश आता है, इसी प्रकाश को जब मैं अपने में ग्रहण करता हूँ, इसी प्रकाश को मैं नेत्रों का देवता बनाता हूँ, तो मेरे नेत्र आभाशाली बन जाते हैं, प्रकाशमय बन जाते हैं, आनन्दवत को प्राप्त होने लगते हैं।

प्रतीचीदिक् कला

उसके पश्चात उन्होंने विचारा क्या प्रतीचीदिक मानो देखो, जिसको हम पश्चिम दिशा कहा जाता है, अहा! उससे अन्न का प्रादुर्भाव होता है, अन्न को पान करते हैं, तो इन्द्रियों में शक्ति आती है, प्रबलता आती है, मानो देखो, यह अप्रत कला कहलाई जाती हैं। यह प्राची दिग्, उदीचि दिक्। ये प्रतीत भी होने लगता है कि प्राची से प्रकाश आता है और दक्षिण विद्युत भण्डार है और प्रतीचि दिक् में अन्न का भण्डार

है और उदीचि से विद्युत और ज्ञान का प्रकाश आता है

दक्षिणीदिक् कला

ये जो श्रोत्रेन्द्रियाँ हैं, इन सर्वत्र इन्द्रियों का सम्बन्ध दक्षिणायान से रहता है। विद्युत की धारा भी उत्तरायण से दक्षिणायन को गति करती है। इसी प्रकार जो शब्द हैं वे शब्द भी मुखारबिन्द से हो करके दक्षिणायन को गति करता है। इसलिए श्रोत्रों का जो सम्बन्ध है वह दक्षिण दिशा से रहता है। ये शब्दों का स्रोत कहलाता है, शब्दों की आभा इसी में निहित रहती है। तो मेरे प्यारे! देखो, ऋषियों ने कितना चिन्तन किया, क्या उत्तरायण से ले करके विद्युत की जो धारा है वह दक्षिणायन को गति करती है। तो दक्षिणायन में अग्नि का मानो वह मानो देखो, उस विद्युत का भण्डार रहता है। दक्षिण दिक किसे कहते हैं? मेरे पुत्रो! देखो, वे पूर्व से दक्षिण को ही विद्युत की तरंगें चलती हैं। मैं विज्ञान के युग में तुम्हें नहीं ले जाऊगा। मैं विज्ञान की वार्ता प्रगट करने नहीं आया हूँ। क्योंकि आध्यात्मिक वाद में विज्ञान की तरंगें ओत प्रोत रहती हैं। मेरे प्यारे! देखो, वह जो दक्षिण उसमें शब्द विद्यमान होता है। एक मानव शब्द का उच्चारण करता है। उच्चारण करके उसका जो शब्दों का भण्डार है, वह दक्षिण दिक कहलाता है।

उदीचि दिक्

ऐसा कहते है। परन्तु इसका जो वैदिक सूत्र क्या कहता है वैदिक सूत्र यह कहता है कि उत्तरायण से जो विद्युत की धारा है वह दक्षिणायन को गति करती है मानो दक्षिण में वह भण्डार बन जाता है ऐसे ही मानव की जो गतियां है वह उत्तरायण में रहनी चाहिए, ज्ञानयुक्त रहनी चाहिए। ज्ञानयुक्त जो धाराएं, तरंगे होती है वही तरंगे मानव को महान बनाती रहती है। मेरे प्यारे! वही उदीचि में रहने वाला सोम बन के सोम की वृष्टि कर रहा है। नाना प्रकार के पदार्थों को उत्पन करने वाला यह मेरा देव सर्वत्र हमें दृष्टिपात आ रहा है।

उत्तरायण की विवेचना

मुझे स्मरण आता रहता है बेटा! त्रेता देखो, द्वापर का काल त्रेता का काल। जब मुनिवरो! देखो, भीष्म के जीवन की चर्चाएँ आती हैं क्या मैं अपने जीवन को उत्तरायण में त्यागूँगा जहाँ जब मुझे प्राचीदिग का स्थान हो जाएगा मानो देखो, उदीची सोमाम् ब्रह्मा उदीची में सोम होता है और वह सोम का स्थान जब तक नहीं होगा जब तक उत्तरायण नहीं होगा। मानो देखो, मेरा जीवन उत्तरायण होना चाहिए। हमारे यहाँ उत्तरायण के सम्बन्ध में भिन्न प्रकार की विवेचना मानी जाती है परन्तु जो वैदिक साहित्य की विवेचना है वेदमन्त्रों के वाङ्गमय में जब प्रवेश करते हैं वहाँ कुछ और ही प्राप्त होता है। वह एक अमृतम् देखो, सोम ब्रह्मा मेरे प्यारे! देखो, सोम का हमें सोम प्राप्त होता है और वह उत्तरायण से प्राप्त होता है, उदीचीदिक से होता है। मेरे प्यारे! देखो, अमृतम् भीष्म ने कहा था क्या मैं अपने जीवन को उत्तरायण बनाना चाहता हूँ उसके पश्चात मैं अपने शरीर का अन्त करूँगा। मेरे प्यारे! देखो, उत्तरायण का महारानी द्रोपदी ने एक समय ये कहा कि प्रभु उत्तरायण का क्या अभिप्राय है? उन्होंने कहा उत्तरायण कहते हैं ज्ञान को और जब तक मानव में ज्ञान नहीं हो जाए जब तक उसका जीवन उत्तरायण नहीं बनेगा। क्योंकि देखो, अज्ञान का नाम तो दक्षिणायन है और वह अन्धकार का स्थान है इसीलिए मैं अपने जीवन को सोम बनाना चाहता हूँ, मैं अपने जीवन को उत्तरायण में ले जाना चाहता हूँ। जैसे एक माह में दो पक्ष होते हैं एक मानो कृष्ण पक्ष है तो एक शुक्ल पक्ष। शुक्ल कहते हैं प्रकाश को और कृष्णाय कहते हैं अन्धकार को। मानो मेरा जीवन भी शुक्ल पक्ष की भाँति होना चाहिए। मेरे पुत्रो! देखो, जब उन्होंने कहा कि ब्रह्मणे हे प्रभु! आप तो ब्रह्म की वार्ता कर रहे हैं। जब महारानी द्रोपदी ने यह कहा कि तुम तो ब्रह्म की वार्ता प्रगट कर रहो। उन्होंने कहा देवी मैं ब्रह्मवादी हूँ। उन्होंने कहा उस समय तुम्हारा ब्रह्मज्ञान कहाँ गया था जब मानो देखो, सभा में दुर्योधन मेरे वस्त्रों को मानो मेरे शरीर से दूरी करना चाहते थे और नग्न करना चाहते थे तो उस समय तुम्हारा ब्रह्मज्ञान कहाँ था? तो मेरे प्यारे! देखो, उन्होंने

कहा देवी मैंने उस समय राष्ट्र के अन्न को ग्रहण किया था और राष्ट्र का जो अन्न होता है।

उसका ब्रह्मज्ञान से कोई सम्बन्ध नहीं होता क्योंकि राष्ट्र का अन्न रजोगुण तमोगुण से सना हुआ अन्न होता है और वही सने अन्न को ग्रहण करके मेरी बुद्धि भी मोह ममता में भ्रमित हो रही थी।

मेरे प्यारे! देखो, द्रोपदी शान्त हो गई और महाराजा अमृतम् देखो, अपने उत्तरायण की याचना करने लगे और उन्होंने कहा कि हे देवी! संसार में उत्तरायण हो जाना चाहिए जो मानव परमात्मा के समीप जाना चाहता है। मुनिवरो! देखो, उत्तरायण का अभिप्राय यह है क्या हमारे यहाँ सूर्य भी छः माह तक उत्तरायण में होता है और छः माह तक दक्षिणायन में होता है परन्तु देखो, यह एक वर्ष का कृत कहलाया गया। परन्तु यहाँ वेदमन्त्रों कुछ और ही कह रहा है। वेदमन्त्रों कहता है अज्ञानाम् ब्रह्मा व्रतम् देवत्वाम् प्रकाशाम् भू अमृतम् देवाः वेद का वाक कहता है क्या यह जो मानो देखो, शुक्ल पक्ष है यह मानव का जीवन एक प्रकाश का जीवन है और कृष्णा पक्ष का जो जीवन है यह मानो अन्धकार का जीवन है तो मैं मानो देखो,अन्धकार को नहीं चाहता। मेरे प्यारे! देखो, यह दो पक्ष मानव के वेदमन्त्रों कहता है क्या इसमें मानव को अपने जीवन में प्रकाश में जीवन को लाना चाहिए। तो मेरे पुत्रो! विचार आता है क्या देखो, यह तो समय की एक अवृत्ति कही जाती है परन्तु जहाँ तक यह प्रसंग आता है कि उत्तरायण हमारे यहाँ प्रकाश है दक्षिणायण में अन्धकार है और ज्ञान का नाम ही देखो, उत्तरायण कहा जाता है। तो इसीलिए सोम को ग्रहण करने वाला अथवा वही तो मुनिवरो! देखो, सौम्य कहलाता है, वही उदीचीदिक कहलाता है। उदीची उत्तरायणम् ब्रह्मा ऋतम् उदेव्राहा यह उदय अमृतम् यह ज्ञान उदय होता है। ज्ञान मानो कहीं से उदय होता है और गृहण करने वाला मानो देखो, शरीर में आत्मा विद्यमान है, जो इसे गृहण करता है अपने में उग्रता को धारण करता हुआ अपने में अपनेपन को ही विचारता रहता है।

तो मेरे प्यारे! देखो, इसका नाम उत्तरायण कहा जाता है। उत्तरायण में जब मानव अपने शरीर को त्यागता है तो वह देव लोक में प्राप्त होता है। वह उत्तरायण कौन सा है जहाँ देवताओं का लोक है? मेरे प्यारे! उत्तरायण कहते हैं जो ज्ञान में जा करके शरीर को त्यागता है। जब उसे विवेक हो जाता है और यह संसार उसके लिए निष्क्रिय बन जाता है तो वह उत्तरायण उसका जीवन बन करके वह महानता को प्राप्त होता है। तो मेरे प्यारे! देखो, उन्होंने अमृतम् यह उत्तरायण की विवेचना की और उदीचीदिक सोमो इसी में सोम की प्राप्ति होती है। सोम कहते हैं बेटा! देखो, जो ऋषि मुनि अपने में सोम का पान करते हैं और जो साधकजन हैं वह परमपिता परमात्मा के अनन्य स्वरूप को जान करके उसी के लिए सदैव प्रार्थना करते रहते हैं वह मुनिवरो! देखो, प्रकाश कहा जाता है। इसी प्रकाश को जो धारण करता है वह मानव इस संसार से पार हो जाता है। तो उत्तरायण और दक्षिणायन की चर्चाएँ मेरे प्यारे! देखो, यह चार कलाएँ हैं जहाँ प्राचीदिग अग्नि का प्रसंग आता है वहाँ प्रकाश है और मुनिवरो! देखो, दक्षिणीदिग वरूणो ब्रह्मे जहाँ वरूण का वर्णन है क्या यह वरूण ही हमारा जीवन है हम इसी में रत्त रहना चाहते हैं। तो यह वार्ता बेटा! देखो, अपने में उच्चारण करके अन्त में मौन हो गये और वह दोनों अपने में मौनता को धारण करने लगे।

छान्दयोग्यपनिषद ४.५.३ कला को जानने का महत्त्व।

स य एतमेवं विद्वाँश्चतुष्कलं पादं ब्रह्मणः प्रकाशवानित्युपास्ते प्रकाशवानस्मिँल्लोके भवति प्रकाशवतो ह लोकाञ्जयति य एतमेवं विद्वाँश्चतुष्कलं पादं ब्रह्मणः प्रकाशवानित्युपास्ते॥

पदार्थः नारायण स्वामी

सो जो कोई ब्रह्म के इस चतुष्कल पाद को ऐसा जानता हुआ प्रकाशवान् (समझकर) उपासना करता है (तो वह विद्वान्) इस लोक में प्रकाशवान् होता है और प्रकाशवान् लोकों को जीत लेता है। जो इस चतुष्कल ब्रह्म के (इस) पाद को प्रकाशवान जानता हुआ उपासना करता है।

सत्यकाम के अन्तःकरण की प्रेरणा

व्याख्याः शृङ्गी मुनि कृष्ण दत्त जी महाराज

वह इन चारों कलाओं के ऊपर मन्थन क्या मैं इन सूत्म परिचय दूंगा, उच्चारण करने का अभिप्राय यह बेटा! रात्रि समय मन्थन मानो देखो, उसी विचार विनिमय करते ही अब प्रातःकाल के पश्चात अब बेटा! देखो, द्वितीय आसन को बेटा! प्रस्थान कर दिया। गऊओं को ले करके जब उन्होंने प्रस्थान किया आगे चल करके वह सांयकाल हो गया सांय काल होते ही बेटा! उन्होने बेटा! वह गऊँ स्थिर हो गई।

गऊँ विराजमान हो गई ब्रह्मचारी ने स्नान किया, स्नान करने के पश्चात बेटा! सन्ध्या की उपासना की और मार्जन और तर्पण करने के पश्चात अग्नि होत्र करने लगा जब प्रथम आहुति प्रदान करने लगे, कहा जाता है, उस समय बेटा! देखो, अग्नि देवता का जन्म हो गया अग्नि देवता ने कहा अरे, ब्रह्मचारी! मैं तुम्हे चार कलाओं का ज्ञान कराएं देता हूँ।

गो के साथ गमन करना।

अग्निष्टे पादं वक्तेति स ह श्वोभूते गा अभिप्रस्थापयाश्चकार ता यत्राभिसायं बभूवुस्तत्राग्निमुपसमाधाय गा उपरुध्य समिधमाधाय पश्चादग्नेः प्राङुपोपविवेश॥

छान्दयोग्यपनिषद ४.६.१

पदार्थः नारायण स्वामी

अग्नि तुझ से (ब्रह्म का दूसरा) पाद कहेगा । वह प्रसिद्ध (सत्यकाम) दूसरे दिन होते ही गायों को (लेकर आचार्य कुल की ओर) चल दिया । उन (गायों) को जहाँ सन्ध्या हुई वहाँ अग्नि को प्रज्वलित कर, गायों को रोक कर अग्नि में समिधा रख

कर, अग्नि के पीछे पूर्व मुख हो (अग्नि के) समीप ही बैठ गए।

तमग्निरभ्युवाद सत्यकाम३ इति भगव इति ह प्रतिशुश्राव॥

पदार्थः नारायण स्वामी

अग्नि ने, उस (सत्यकाम) को सत्यकाम, सत्यकाम कह कर पुकारा । (सत्यकाम ने) हाँ भगवन्! ऐसा प्रत्युत्तर दिया। छान्दयोग्यपनिषद ४.६.२

पृथ्वी अन्तरिक्ष द्यौ समुद्र कला

व्याख्याः श्रृङ्गी मुनि कृष्णा दत्त जी महाराज

इन चारों कलाओं के ऊपर मानो विचार विनिमय करने का प्रयास करो, उस समय बेटा! देखो, ब्रह्मचारी देखो, रात्रि की गोद में जाने के पश्चात रात्रि की गोद में जा करके विचार विनिमय करना प्रारम्भ कर दिया, प्रारम्भ करते हुए उन्होंने विचारा कि मुझे आचार्य ने अग्नि देवता ने मानो चारों कलाओं का ज्ञान कराया है।

पृथ्वी कला

सबसे प्रथम पृथ्वी कला है, अहा! यह जो पृथ्वी है अहा! इस पृथ्वी से नाना प्रकार का खाद्य और खनिज पदार्थ उत्पन्न होता है, जितना भी खनिज है, उसका सम्बन्ध मानो पृथ्वी से है, पृथ्वी के गर्भ से उत्पन्न हुआ करता है, और खाद्य भी उसी के द्वार से उत्पन्न होता है, खाद्य और खनिज पदार्थों की उत्पति कहां से होती है मुनिवरों! मानो पृथ्वी कला से होती है। इस पृथ्वी के गर्भ में क्या नहीं है, बेटा! यह तो माता वसुन्धरा है, मानो यह अपने में सबको बसाने वाली है, बेटा! यह वसुन्धरा कैसी महान है, कैसी पवित्र है, मानो यह बेटा! सबका लालन पालन करने वाली है। अहा! इसके गर्भ में बेटा! कहीं स्वर्ण की धातु उत्पन्न होती है, कहीं नाना प्रकार के रत्न उत्पन्न हुआ करते हैं, इसके गर्भ में बेटा! सुन्दर सुन्दर आभा उत्पन्न होती रहती है, जिससे बेटा! राष्ट्र का कल्याण होता है। राष्ट्र भी मानो द्रव्य भी इसी से उत्पन्न हुआ करता है।

आओ, मेरे प्यारे! ऋषिवर! आज हम पृथ्वी कला पर अनुसन्धान करते रहे इस पृथ्वी से नाना प्रकार के खनिजों का जन्म होता है, नाना औषधियों का जन्म होता है, जिससे बेटा! मानव के जीवन में एक सुन्दर आभा का जन्म होना प्रारम्भ हो जाता है। हे माँ वसुन्धरा! तू वास्तव में हमारा कल्याण करने वाली है, कल्याण में ही आनन्द में ही तू अपने में धारण करने वाली है, तू हमें आनन्द प्रदान करने

वाली है, इसीलिए बेटा! ब्रह्मचारी सत्यकाम ने पृथ्वी के ऊपर अनुसन्धान करना प्रारम्भ कर दिया।

भारद्वाज मुनि के यहाँ पृथ्वी कला को अच्छी प्रकार जान लिया था। देखो, हमारे यहाँ ज्ञान और विज्ञान से गुथा हुआ यह जो जगत है यह विशाल है, यह महान है। वह एक ही सूत्र में पिरोया हुआ है, इस को प्रणव कहते हैं।

अन्तरिक्ष कला

उसके पश्चात अन्तरिक्ष कला बेटा! देखो, अन्तरिक्ष किसे कहा जाता है, जहाँ बेटा! शब्दों की ओत प्रोतता हो जाती है, नाना प्रकार के परमाणु उसी में रमण कर जाते है। बेटा! अन्तरिक्ष कहते हैं जिसमें बेटा! सूक्ष्म परमाणु भ्रमण करते रहते हैं वह सूक्ष्म परमाणुओं का जो भण्डार है वह अन्तरिक्ष कहलाया गया है वह अन्तरिक्ष बेटा! देखो, सूक्ष्मतम को अपने में अपनाने वाला है वह सब वस्तुओं को अपनाता हुआ अपने में ग्रहण कर लेता है, अपने में शोषण कर लेता है, अपने में ही बेटा! सर्वत्र ब्रह्माण्ड को अपने में समाहित कर लेता है। बेटा! मानो वह अन्तरिक्ष कला आज मानो देखो, पृथ्वी का और अन्तरिक्ष का एक महान सम्बन्ध होता है।

द्यौ कला

उसके पश्चात मुनिवरों! देखो, द्यौ कहा जाता है बेटा! द्यौ कहते हैं, जो मानो देखो, जिसमें बेटा! प्रहा तुक होता है मानो देखो, द्यौ कहते हैं लोंको को जिसमें लोक लोकान्तरों की आभा विराजमान रहती है, उसका द्यौ कहा जाता है, क्योंकि प्राण उसमें रमण करने वाला है। एक दूसरा लोक लोकान्तर बेटा! एक दूसरे से मिलान करता रहता है, मानो उनका मिलान नहीं हो पाता, मिलान करना तो चाहते हैं, परन्तु हो नही पाता वह क्यों नहीं होता द्यौ के कारण वह जो द्यौ कला है, वह लोक लोकान्तरों को बेटा! अपने अपने आङ्गन में भ्रमण कराती रहती है, अपने अपने आङ्गन में बेटा! भ्रमण करती रहती है, नाना प्रकार लोक लोकान्तरों की मैं आज चर्चा नहीं करने आया हूँ, केवल वाक उच्चारण करने का अभिप्रायः यह है,

क्या उसको हमारे यहाँ द्यौ कहा जाता है। जिसमें बेटा! लोक लोकान्तरों की आभा विराजमान होती है। वह तेजो से युक्त रहने वाली है। इसी में बेटा! एक महानता की ज्योति उद्यत होती रहती है, उसी से मुनिवरों! देखो, द्यौ की आभा, लोक लोकान्तरों में प्रदीप्त रहने वाली है। मुझे स्मरण आता रहता है, बेटा! एक समय महर्षि भारद्वाज मुनि से कहा था, सोमकेतु जी ने क्या महाराज! यह द्यौ क्या है? क्या द्यौ उसे कहा जाता है जो लोक लोकान्तरों को स्थिर किए हुए है, मानो पृथ्वी के आङ्गन में भ्रमण कराए रहती है। उसी को द्यौ कहा जाता है।

समुद्र कला

मानो समुद्र क्या है? परमपिता परमात्मा ने बेटा! जब इस पृथ्वी का रचा, यह पृथ्वी जब जल के द्वारा से उत्पन्न हुई, तो बेटा! देखो, इसकी मेखला बना दी गई। जैसे यज्ञशाला में यज्ञवेत्ता, ब्रह्मवेत्ता, ब्राह्मणवेत्ता यह यज्ञशाला के यह मेखला बनाता है, जल सिंचन करता है, यज्ञमान के द्वारा इसी प्रकार पृथ्वी के आङ्गन में यह एक प्रकार की मेखला है। समुद्र रूपी जो मेखला है, बेटा! जो पृथ्वी से विष उगला जाता है, उसे समुद्र अपने में शोषण कर लेता है, अपने में ग्रहण कर लेता है, इसीलिए बेटा! देखो, हमारे यहाँ समुद्र कला को विशेष माना गया है। पवित्रवत माना गया है, क्योंकि वह विष को अपने में शोषण करने वाला है। मानव को जीवन प्रदान करने वाला है। बेटा! इसको हमारे यहाँ समुद्र कला कहा जाता है, इसमें नाना प्रकार की सृष्टि होती है, नाना प्रकार के प्राणी इसमें बेटा! रमण करते रहते है, विशाल से विशाल बेटा! जलवत रहने वाला है। इसी से सुन्दर सुन्दर मानो पर्जन्य होता है पर्जन्य से बेटा! सुन्दर वृष्टि होती है उसी से मेघों का प्रादुर्भाव उत्पन्न होता है। यह मानव के बेटा! जीवन को सिंचन करने वाली है इसीलिए से बेटा! आज का हमारा वाक्, यह क्या कह रहा है बेटा! आज हम विचार विनिमय करने वाले बनें बेटा! पृथ्वी कला अन्तरिक्ष कला और द्यौ कला और समुद्र कला यह चारों कलाओं के ऊपर मानव को विचार विनिमय करना चाहिए। इसके पश्चात

मैं बेटा! इसका सूक्ष्म परिचय दे रहा हूँ।

कला को जानने का महत्त्व।

स य एतमेवं विद्वाँश्चतुष्कलं पादं ब्रह्मणोऽनन्तवानित्युपास्तेऽनन्तवानस्मिँल्लोके भवत्यनन्तवतो ह लोकाञ्जयति य एतमेवं विद्वाँश्चतुष्कलं पादं ब्रह्मणोऽनन्तवानित्युपास्ते ॥ छान्दयोग्यपनिषद ४.६.४

पदार्थः नारायण स्वामी

सो जो (कोई ब्रह्म के इस चतुष्कलपाद को इस प्रकार जानता हुआ अनन्तवान् समझ कर) उपासना करता है (वह) इस लोक में अनन्तवान् होता है और अनन्तवान् लोकों को जीत लेता है । जो इस प्रकार इस चतुष्कल ब्रह्म के (इस) पाद को अनन्तवान्, ऐसा (जानकर) उपासना करता है।

सत्यकाम का गो के साथ गमन

व्याख्या: शृङ्गी मुनि कृष्णा दत्त जी महाराज

वाक उच्चारण करने का अभिप्राय यह क्या महाराज सत्यकाम बेटा! विचार विनिमय करते रहे वही प्रातः काल हो गया प्रातः काल होते ही बेटा! गऊँओं को ले करके बेटा! उन्होंने वहाँ से प्रस्थान कर दिया गुरु के आसन को जाने के लिए प्रस्थान कर लिया भ्रमण करते हुए बेटा! वहीं सांयकाल हो गया सांयकाल होते ही मुनिवरों! उन्होंने बेटा! स्नान किया मार्जन किया तर्पण किया सन्ध्या और उपासना करने के पश्चात बेटा! देखो, वह उसमें आहुति प्रदान करने लगे जब प्रथम आहुति प्रदान करने लगे तो कहा जाता है मुनिवरों! देखो, उस समय वायु देवता का अप्रतम् आदित्य देवता का जन्म हो गया और आदित्य ने कहा हे ब्रह्मचारी! मैं तुम्हे चार कलाओं का ज्ञान कराएं देता हूँ।

हँसस्ते पादं वक्तेति स ह श्वोभूते गा अभिप्रस्थापयाञ्चकार ता यत्राभिसायं बभूवुस्तत्राग्निमुपसमाधाय गा उपरुध्य समिधमाधाय पश्चादग्नेः प्राङुपोपविवेश॥
छान्दयोग्यपनिषद ४.७.१

पदार्थः नारायण स्वामी

हंस तुझ से (ब्रह्म के तीसरे) पाद को कहेगा । वह प्रसिद्ध (सत्यकाम) दूसरा दिन होते ही गायों को (लेकर आचार्य कुल की ओर) चल दिया । जहाँ सन्ध्या हुई गायों को वहाँ रोककर, अग्नि प्रज्वलित कर और (उसमें) समिधा रख कर (उस) अग्नि के पीछे पूर्व मुख हो समीप ही बैठ गये।

छान्दयोग्यपनिषद ४.७.२ सत्यकाम को अन्तःकरण की प्रेरणा।

तँहँस उपनिपत्याभ्युवाद सत्यकाम३ इति भगव इति ह प्रतिशुश्राव॥

सत्यकाम का गो के साथ गमन

पदार्थः नारायण स्वामी

उस (सत्यकाम) को, हंस ने, (उपनिपत्य) समीप आकर, सत्यकाम! सत्यकाम! कह कर पुकारा (सत्यकाम ने) हे भगवान्! ऐसा प्रत्युत्तर दिया।

अग्नि सूर्य चन्द्र विद्युत कला

व्याख्याः श्रृङ्गी मुनि कृष्ण दत्त जी महाराज

अग्नि कला

विद्युत के पश्चात मुनिवरों! देखो, अग्नि कला आती है, अग्नि कला उसे कहते हैं, जो बेटा! देखो, तेजोमयी संसार में रमण करने वाली है, जो तेजोमयी उसका प्रकाश रहने वाला है इसीलिए बेटा! हमें अग्नि कला को जानना चाहिए। इसी प्रकार आगे अग्नि कला है। अग्नि कला पर जब मानव अनुमान करता है कि यह अग्नि इस संसार में कितने प्रकार की बन करके प्रदीप्त रहती है। एक अग्नि वह होती है जो गार्हपथ्य अग्नि कहलती है, द्वितीय अग्नि गृहपथ्य नाम की अग्नि है, तृतीय अग्नि आवनिय नाम की है, और चतुर्थ अग्नि नचिकेता नाम से प्रसारित की गई है और पञ्चम अग्नि वाग्रणि छटम् अग्नि का नाम वैश्वानर है। यह नाना प्रकार के अग्नि के स्वरूप माने जाते हैं। एक अग्नि वह होती है जो ब्रह्मचारी के हृदय में प्रदीप्त रहती है जिसे वह निगलता हुआ धन्य धन्य हो जाता है कृतज्ञ हो जाता है। ब्रह्मचारी अग्निहोत्र करता है, ब्रह्मचार्य की रक्षा करता हुआ ब्रह्म में विचरण करता है, ब्रह्म में समावेश हो जाता है। उसकी महानता उसे तरंगित कर देती है।

आगे जितना व्यवहार है पति पत्नी के, मिता पुत्र में, पुत्री पिता में, माता पिता में, राजा और प्रजा में, एक दूसरे लो लोकान्तरों में यह सब अग्नि कला के कारण ही होता है। यदि तेज नहीं होगा तो संसार में प्राण भी नहीं होगा आर प्राण नहीं होगा तो अन्न और किसी प्रकार की उत्पत्ति नहीं होगी। सबसे प्रथम यज्ञशाला में प्रविष्ट होने वाला ब्राह्मण यदि अग्नि को प्रदीप्त करता उसके पश्चात शाकल्प को देता है। यदि अग्नि न होगा तो शांकल्प भी नहीं होगा। इसलिए आज हमें विचार विनिमय करना है और अग्निकला को जानना है। इस अग्नि कला को जानते हुए हमे संसार

सागर से पार होना है।

सूर्य कला

उस समय बेटा! देखो, देवता तो अन्तर्ध्यान हो गएं और ब्रह्मचारी सत्यकाम बेटा! रात्रि की गोद में बेटा! पुनः चला गया उन्होंने विचारा क्या सबसे प्रथम अहा! देवता ने मुझे सूर्य कला का वर्णन कराया है और चन्द्र कला और जहाँ अग्नि कला आती है अग्नि वही पनपती है अग्नि के स्थान में तो प्रव्हा माना गया है जिसको बेटा! वायु कहा जाता है। मेरे प्यारे! ऋषिवर! ब्रह्मचारी सत्यकाम ने प्रारम्भ कर दिया क्या आज मैं सूर्य कला को जानना चाहता हूँ, सूर्य में नाना प्रकार की किरणों का जन्म होता है, जब प्रातःकाल में सूर्य उदय होता है, तो सहत्राणि किरणें बेटा! मानो देखो, इन्द्र बन करके आता है। इन्द्र जब सहस्र भगों वाला बन करके आता है, भग नाम बेटा! किरणों को कहा जाता है, नाना प्रकार की किरणों को ले करके वह संसार में आता है, संसार का प्रकाशक बनता हुआ नाना प्रकार की वनस्पतियों को प्रकाश में जीवन प्रदान करता हुआ मानो देखो, लोक लोकान्तरों को प्रकाशमान बनाता चला जाता है। यहाँ तब विषधर जो प्राणी होते हैं, उन को विष भी प्रदान करते हैं, और उनके विष को अपनी किरणों को अपने में शोषण भी कर लेते हैं, बेटा! देखो, यह जो सूर्य कला है। वह महान कला कहलाई जाती है, नाना प्रकार की किरणों का सम्बन्ध बेटा! पृथ्वी से होता है, कही बेटा! वायु से होता है, चन्द्र लोको से होता है। शनि लोको से होता है, मङ्गल लोकों से होता है, नाना प्रकार के बुध लोकों से भी इसका विशेष सम्बन्ध रहता है। परन्तु मैं आज बेटा! अधिक चर्चा करना नहीं चाहता हूँ, संक्षिप्त परिचय देने आया हूँ, वाक उच्चारण करने का अभिप्राय ये, सत्यकाम ने बेटा! सूर्य के ऊपर जो सूर्य कला है और यह हमारे जीवन का प्रकाशक है। आत्मा का और नेत्रों का जो समन्वय हो जाता है, और नेत्रों का समन्वय सूर्य की किरणों से हो जाता है, उस समय बेटा! नेत्रों का देवता सूर्य ही तो होता है। इसीलिए आज हमें सूर्य को अपना देववत स्वीकार करके

अपने जीवन को उन्नत बनाना चाहिए।

चन्द्रमा कला

उसके पश्चात उन्होंने विचारा चन्द्र कला मानो चन्द्रमा नाना प्रकार की आभा को ले करके संसार में आता है, कलाओं से परिपक्व होता हुआ पूर्णिमा के दिवस बेटा! संसार को अमृत प्रदान करता चला जाता है, उस अमृत को पान करने वाला अद्भुत प्राणी मानो देखो, अद्भुत बन जाता है। महान बन जाता है, अमृतमयी बन जाता है, इसीलिए बेटा! चन्द्रमा की पवित्र कान्ति और चन्द्रमा को देवता स्वीकार करते हुए, मानो वह अमृत प्रदान करता है, अमृत में उसका एक आभा अपने मानव जीवन में बेटा! उसका हूत करना चाहिए। हमारे यहाँ बेटा! जिसको ईंगला, पिंगला, सुषुम्णा कहते हैं, हमारे यहाँ आचार्यों ने बेटा! जब मानो त्रिवेणी के स्थान में जहाँ तीनों नाड़ियों का जहाँ मिलान होता है, यहां से मानो चन्द्रमा स्वर्णकेतु नाम की नाड़ी से उसका विशेष सम्बन्ध होता है, बेटा! उस नाड़ी को जानना ईंगला, पिंगला, सुषुम्णा को जानना उसी से बेटा! देखो, रस पान करता रहता है। आचार्य योगी बन जाता है। पवित्रवत को प्राप्त हो जाता है। क्योंकि उसके अन्दर सिंचन किया जाता है।

विद्युत कला

आओ, मेरे प्यारे! ऋषिवर! मैं योगाभ्यास में नहीं जाना चाहता हूँ, वाक उच्चारण करने का अभिप्राय यह क्या सूर्य चन्द्र और विद्युत जिसको बेटा! देखो, विद्युत कहा जाता है, बेटा! विद्युत कला है, जो मुनिवरों! देखो, जिस लोक लोकान्तरों से जिनका उपराम होता है, जल से भी उसका उपराम होता है, मानो देखो, जहाँ जिस भी लोक में जाओगे, वहीं तुम्हें विद्युत का प्रभाव प्राप्त होगा, बेटा! विद्युत वह कला है, जिसको वैज्ञानिक जन जान करके नाना प्रकार के यन्त्रों में परणित हो जाते हैं। मुनिवरों! देखो, यहाँ चौरासी प्रकार की आभा होती हैं बेटा! विद्युत की देखो, चौरासी प्रकार की जो आभा होती हैं, उन आभाओं में एक दूसरी आभा

अग्नि सूर्य चन्द्र विद्युत कला

में जब वैज्ञानिक जानना प्रारम्भ कर देता है। तो बेटा! वह अप्रतम् जब मुनिवरों! चौरासी प्रकार आभा को जो वैज्ञानिक जान लेता है, वह बेटा! अकृतम ब्रह्म लोकाम् प्रव्हा अस्ति अजतम् नामा स्थिर भागा लोकाः ऐसा आचार्य ने कहा है, क्या वह सहस्त्र लोकों के विज्ञान का वेत्ता बन जाता है, आज हमें उस महान विद्युत का जानना है, जो विद्युत हमारे सहयोगी कार्य कर रही है, बेटा! राष्ट्र को प्रकाशमान बनाती है। मानो देखो, जल को गतिशील बनाती है, अग्नि को प्रदीप्त करने वाली है, मुनिवरों! सूर्य की किरणों का प्रादुर्भाव करने वाली है, चन्द्रमा में कान्ति देने वाली है, नाना प्रकार के लोक लोकान्तरों को जो क्रियाशील बनाती है, उसी का नाम हमारें यहाँ बेटा! विद्युत कहा गया है। आज हमें विद्युत को जानना है।

ब्रह्मणः सोम्य ते पादं ब्रवाणीति ब्रवीतु मे भगवानिति तस्मै होवाचाग्निः कला सूर्यः कला चन्द्रः कला विद्युत्कलैष वै सोम्य चतुष्कलः पादो ब्रह्मणो ज्योतिष्मान्नाम॥
छान्दयोग्यपनिषद ४.७.३

पदार्थः नारायण स्वामी

हे सोम्य! ब्रह्म के (तीसरे) पाद को तुझ से कहूं । (सत्यकाम ने उत्तर दिया कि) आप मुझ से कहें उस (सत्यकाम) को (हंस ने) कहा कि पहली कला अग्नि, दूसरी कला सूर्य, तीसरी कला चन्द्रमा और चौथी कला बिजली है । निश्चय यह सोम्य! हे चतुष्कल ब्रह्म ज्योतिष्मान् नाम वाला है।

कला को जानने का महत्व

व्याख्याः शृङ्गी मुनि कृष्ण दत्त जी महाराज

चिन्तन करते हुए ब्रह्मचारी सत्यकाम को बेटा! वही प्रातःकाल हो गया प्रातःकाल होते ही उन्होंने बेटा! वहाँ से गऊँओं को ले करके गुरु आश्रम को प्रस्थान कर दिया, भ्रमण करते हुए बेटा! जब वही सांय काल हो गया था, सांयकाल को गऊँ स्थिर हो गई। ब्रह्मचारी ने स्नान किया मार्जन किया तर्पण किया सन्ध्या उपासना करने के पश्चात जब अग्नि होत्र करने लगे प्रथम आहुति दी तो कहा जाता है कि वायु देवता का जन्म हो गया वायु देवता ने कहा अरे, सत्यकाम! मैं तुम्हे चार कलाओं का ज्ञान करा देता हूँ।

स य एतमेवं विद्वाँश्चतुष्कलं पादं ब्रह्मणो ज्योतिष्मानित्युपास्ते ज्योतिष्मानस्मिँल्लोके भवति ज्योतिष्मतो ह लोकाञ्जयति य एतमेवं विद्वाँश्चतुष्कलं पादं ब्रह्मणो ज्योतिष्मानित्युपास्ते॥ छान्दयोग्यपनिषद ४.७.४

पदार्थः नारायण स्वामी

सो जो (कोई) ब्रह्म के इस चतुष्कल पाद को ऐसा जानता हुआ और ज्योतिष्मान् (समझ कर) उपासना करता है (वह) इस लोक में ज्योतिष्मान् होता है और ज्योतिष्मान् लोकों को जीत लेता है, जो इस प्रकार इस चतुष्कल पाद ब्रह्म के (इस) पाद को ज्योतिष्मान् ऐसा (समझ कर) उपासना करता है।

छान्दयोग्यपनिषद ४.८.१ सत्यकाम के द्वारा याग करना।

मद्गुष्टे पादं वक्तेति स ह श्वोभूते गा अभिप्रस्थापयाञ्चकार ता यत्राभिसायं बभूवुस्तत्राग्निमुपसमाधाय गा उपरुध्य समिधमाधाय पश्चादग्नेः प्राङुपोपविवेश॥

पदार्थः नारायण स्वामी

मद्दु तुझ से (ब्रह्म के चौथे) पाद को कहेगा । वह प्रसिद्ध (सत्यकाम) प्रातःकाल होते ही गायों को (लेकर आचार्य कुल की ओर चल दिया, जहाँ सन्ध्या हुई गायों को वहाँ रोक कर, अग्नि प्रज्वलित कर और) उसमें समिधा रखकर उस अग्नि के पीछे पूर्व मुख हो समीप ही बैठ गए।

मन कला-चक्षु कला-श्रोत्रम् कला-घ्राण कला

ऋषि कृष्ण दत्त जी महारा

व्याख्याः शृङ्गी मुनि कृष्ण दत्त जी महाराज

मन कला

आज चार कलाओं का ज्ञान मेरे से श्रवण करो, उन्होंने कहा मन कला, चक्षु कला, श्रोत्र कला और घ्राण कला इन चारों कलाओं को जानने का तुम प्रयास करो, आज तुम महान जिज्ञासु बन जाओगे। सबसे प्रथम मन कला मुनिवरों! देखो, मन ही पाप पुण्य को दृष्टिपात करने वाला है, यह मन ही एक ऐसा सूत्र है, जिसको जान करके मुनिवरों! देखो, मानो इस मानव प्राण की आभा को जान जाता है, आज हमें मानसिक मनन करना है। क्योंकि मन कला एक ऐसी कला है, जो आत्मा का दूत कहलाया गया है, आज देखो, यह मन का जो प्रादुर्भाव होता है, यह अन्न के द्वारा होता है, इसीलिए अन्न हमारा श्रेष्ठ होना चाहिए बेटा! अन्न से ही मन का जन्म होता है। इसीलिए मन को बेटा! देखो, प्रव्हा देखो, इस पृथ्वी का प्रतीक माना गया है।

आओ, मेरे प्यारे! ऋषिवर! आज हम मन कला के ऊपर अनुसन्धान करते रहें, मन ऐसा तीव्र गति से रमण करने वाला है, जैसे बेटा! एक महानता की ज्योति में रमण करने वाला हो, मन की प्रतिभा बेटा! देखो, चार कला इसके आधीन रहने वाली है, मन के चार कला कौन सी हैं बेटा! देखो, प्राचीदिक्, और उदीचीदिक्, प्रतीचीदिक्, और दक्षिणीदिक यह चार कलांए बेटा! मन से जिनका विशेष सम्बन्ध होता है, मन इन दिशाओं में रमण करने वाला है, क्योंकि यह जो दिशाएं हैं, उनमे मन रमण करने वाला क्योंकि दिशाओं से मन का सम्बन्ध रहता है, जैसे दिशाओं में वायु रमण करता है, विद्युत रमण करता है, इसी प्रकार मन भी बेटा! देखो, तीव्र गति से रमण करने वाला है, चञ्चलवत कहलाता है, अहा! यह मन इतना गतिवान है, क्या यह मुनिवरों! देखो, मानव को कृत करता रहता है और सुयोग्य भी बना देता है मेरे प्यारे! ऋषिवर! जहाँ मन कला है।

चक्षु कला

मन कला के पश्चात देखो, चक्षु कला, चक्षु कला हमारे यहाँ चक्षु नेत्रों का कहा जाता है। बेटा! नेत्रों को जानना चाहिए, आज नेत्र ही हमारे बेटा! पाप पुण्य का निर्णय कराते हैं नेत्रों से बेटा! शुद्ध अशुद्ध को मानव दृष्टिपात करता है इसीलिए मानव को विचारना है कि हमे नेत्रों को पवित्र बनाना है, नेत्रों से कुदृष्टिपान नहीं करना है, नेत्रों से सुविचारों को लाना है, अहा! नेत्रों से बेटा! दृष्टिपात करता है, अमुक प्राणी बहुत सुन्दर है, बहुत स्वभाव का पवित्र है, अमुक प्राणी बहुत ही उत्तम है। अमुक प्राणी दृष्टा में सदैव परणित होता रहता है, बेटा! यह विचार मानव के मस्तिष्क में बारम्बार आते रहते हैं, नेत्रों के कारण आते हैं, इसीलिए चक्षु कला को हमें पवित्र बनाना है।

श्रोत्र कला

बेटा! श्रोंत्रो का सम्बन्ध बेटा! इन मन की आभा इन पृथ्वियों में और मानो देखो, दिशाओं में परणित रहती है। इसी प्रकार हमारे जो श्रोत्र है, इनका सम्बन्ध इन दिशाओं से रहने वाला है, आज हम दिशाओं में मानो चक्षुओं को अप्रतम् श्रोत्रों को रमण कराते रहें। श्रोत्र ही हमारे बेटा! श्रोत्र इन्द्रियाँ जो हैं, इनका सम्बन्ध दिशाओं से होता है, पृथ्वीवत से होता है ऊर्ध्वा ध्रुवा से होता रहता है, इसीलिए मानव को इन श्रोत्रों को भी जानना चाहिए, इनके ऊपर अनुसन्धान करना है।

घ्राण कला

घ्राण कला जिसे प्राण कला भी कहते हैं, जानने का प्रयास करें। इसके पश्चात मुनिवरों! देखो, घ्राण कला घ्राण से मन्द सुगन्ध का बोध होता है। मन्द सुगन्ध पृथ्वी से इसका सम्बन्ध रहता है, जितने पार्थिव तत्त्व हैं, उनका सम्बन्ध बेटा! घ्राण से होता है इसीलिए वैज्ञानिक पार्थिव तत्त्वों से सम्बन्धित होता है। इसके पश्चात घ्राण कला है। घ्राण कला उसे कहते है जो गन्ध सुगन्ध दोनों को ग्रहण करती है। उसी से मानव इस पृथ्वी कला को जान लेता है। आज जितने भी वायु के परमाणु

हैं, जल के परमाणु हैं, पृथ्वी के परमाणु हैं वास्तव में यह घ्राण कला इनका प्रतिनिधित्व किया करती है।

सत्यकाम के अन्तःकरण की प्रेरणा।

तं मद्गुरुपनिपत्याभ्युवाद सत्यकाम३ इति भगव इति ह प्रतिशुश्राव॥ छान्दयोग्यपनिषद ४.८.२

पदार्थः नारायण स्वामी

उस (सत्यकाम) को, मद्गु ने समीप आकर, सत्यकाम! सत्यकाम! कह कर पुकारा (सत्यकाम ने) हाँ भगवन्! ऐसा प्रत्युत्तर दिया ।

छान्दयोग्यपनिषद ४.८.३ मन चक्षु श्रोत्रं प्राण कला।

ब्रह्मणः सोम्य ते पादं ब्रवाणीति ब्रवीतु मे भगवानिति तस्मै होवाच प्राणः कला चक्षुः कला श्रोत्रं कला मनः कलैष वै सोम्य चतुष्कलः पादो ब्रह्मण आयतनवान्नाम॥

पदार्थः नारायण स्वामी

हे सोम्य! ब्रह्म के (चौथे) पाद को तुझ से कहूं । (सत्यकाम ने उत्तर दिया कि) आप मुझ से कहें । उस (सत्यकाम) को (मद्गु ने) कहा कि पहली कला प्राण, दूसरी कला चक्षु, तीसरी कला श्रोत्र और चौथी कला मन है । निश्चय हे सोम्य! हे चतुष्कल ब्रह्म आयतवान् नाम वाला है।

कला को जानने का महत्त्व।

स यै एतमेवं विद्वाँश्चतुष्कलं पादं ब्रह्मण आयतनवानित्युपास्त आयतनवानस्मिँल्लोके भवत्यायतनवतो ह लोकाञ्जयति य एतमेवं विद्वाँश्चतुष्कलं पादं ब्रह्मण आयतनवानित्युपास्ते॥ छान्दयोग्यपनिषद ४.८.४

पदार्थः नारायण स्वामी

मन कला-चक्षु कला-श्रोत्रम् कला-घ्राण कला

सो जो (कोई) ब्रह्म के इस चतुष्कल पाद को ऐसा जानता हुआ और आयतनवान् (समझकर) उपासना करता है (वह) इस लोक में आयतनवान् होता है और आयतनवान् लोकों को जीत लेता है, जो इस प्रकार, इस चतुष्कल पाद ब्रह्म के (इस) पाद को आयतवान् ऐसा (समझ कर) उपासना करता है।

सत्यकाम आचार्य कुल में

शृङ्गी मुनि कृष्णदत्त जी महाराज

व्याख्या: शृङ्गी मुनि कृष्णा दत्त जी महाराज

यह है बेटा! आज का हमारा वाक आज का हमारा यह वाक क्या कहा रहा है, हम परमपिता परमात्मा की उपासना करते हुए, उस महान श्रोत्रीय देव की महिमा का गुणगान गाते हुए, हम षोडश कलाओं को जानने वाले बनें। बेटा! षोडश कलाएं देखो, जैसे हमारे यहाँ प्रतीचीदिक और दक्षिणीदिक्, प्राचीदिक्, और उदीचीदिक बेटा! देखो, पृथ्वी कला, समुद्र कला, अन्तरिक्ष कला, द्यौ कला, सूर्य कला, चन्द्र कला, मुनिवरों! देखो, विद्युत कला, अग्नि कला, मन कला, चक्षु कला, श्रोत्र कला और घ्राण कला यह षोडश कला कहलाती है।

प्राप हाचर्यकुलं तमाचर्योऽभ्युवाद सत्यकाम३ इति भगव इति ह प्रतिशुश्राव॥ छान्दयोग्यपनिषद ४.९.१

पदार्थः नारायण स्वामी

प्रसिद्ध (सत्यकाम) आचार्यकुल को लौट आया । उस (सत्यकाम) को आचार्य ने सत्यकाम सत्यकाम कह कर पुकारा (सत्यकाम ने) हाँ भगवन्! ऐसा उत्तर दिया।

छान्दयोग्यपनिषद ४.९.२ सत्यकाम का ब्रह्मविद् के समान सुशोभित।

ब्रह्मविदिव वै सोम्य भासि को नु त्वानुशशासेत्यन्ये मनुष्येभ्य इति ह प्रतिजज्ञे भगवाँस्त्वेव मे कामे ब्रूयात्॥

पदार्थः नारायण स्वामी

हे सौम्य! निश्चय तू ब्रह्मविद् के समान सुशोभित हो रहा है किस ने तुझ को शिक्षा दी है ? (सत्यकाम ने) उत्तर दिया कि मनुष्येतरों ने (मुझे शिक्षा दी है) परन्तु आप ही मुझे इच्छानुसार उपदेश देवें।